महात्मा गाँधी केन्द्रीय विश्वविद्यालय, बिहार

मानविकी एवं भाषासंकाय

संस्कृत विभाग

एम. ए. द्वितीय सत्र

विषय – उत्तररामचरित

Code – SNKT2002

विश्वजित वर्मन
सहायक-आचार्य, संस्कृत विभाग
biswajitbarman@mgcub.ac.in

उत्तररामचरिते भवभूतिर्विशिष्यते

भवभूति अपने व्यक्तित्व और पाण्डित्य की दृष्टि से संस्कृत साहित्य की अनुपम निधि है। मानव-भावों के विश्लेषण में, प्रकृति-चित्रण में, कथा-शिल्प में, कल्पना की उड़ान में, रसावतरण में तथा विशुद्ध प्रेम के चित्रण में भवभूति का उत्तररामचरित नाटक सर्वश्रेष्ठ है। इसीलिए कहा गया है 'उत्तररामचरिते भवभूतिर्विशिष्यते।'

उत्तररामचरित नाटक में भाषा और भाव का अद्भुत सामञ्जस्य देखने को मिलता है। भवभूति की भाषा विषयानुसारिणी है। वे भयावह दृश्यों के वर्णन में समास-संकुल ओजोगुणविशिष्ट पद्य और कोमल प्रसङ्गों में असमस्त और सरल रचना भी करते हैं। गौड़ी रीति के सम्राट होने पर भी वे वैदर्भी के उपासक हैं।

भवभूति की रचना वैचित्र

भवभूति एक ओर यदि समासरहित सरल पद्य लिखते है–

वज्रादपि कठोराणि मृदूनि कुसुमादपि।
लोकोत्तराणां चेतांसि को हि विज्ञातुमर्हति॥

तो दूसरी ओर दीर्घसमासयुक्त ओजो गुणविशिष्ट पद्य भी लिखते हैं-

ज्याजिह्वयावलयितोत्कटकोटिदंष्ट्रमुद्भूरिघोरघनघर्घरघोषमेतत्।
ग्रासप्रसक्तहसदन्तकवक्त्रयन्त्रलीलाविडम्बिविकटोदरमस्तु चापम्॥ ४.२९

अर्थात् मौर्वी रूप जिह्वा से वेष्टित उग्र अग्रभाग रूप दाढ़ो वाला, उर्ध्वगामी भीषण मेध के शब्द के समान घर्घर घोष करने वाला यह धनुष निगल लेने में लगा हुआ होने के कारण अट्टहास करता हुआ, यमराज के मुखयन्त्र की जम्हाई का अनुकरण करने के कारण भीषण उदरवाला होवे।

भवभूति एक ओर यदि परम सुकुमार भावों का चित्रण कर सकते हैं, तो दूसरी ओर ओजोमय भावनाओं का चित्र भी उपस्थित कर सकते हैं। उनकी रचनाओं में भाषा की प्रौढ़ता, शब्द-विन्यास की प्राञ्जलता और अर्थगौरव की प्रधानता प्रचुर रीति से उपलब्ध होती हैं। उन्होंने स्वयं अपनी शैली के विषय में संकेत किया है—

यत्प्रौढत्वमुदारता च वचसां यच्चार्थतो गौरवम्।
तच्चेदस्ति ततस्तदेव गमकं पाण्डित्य-वैदग्ध्ययो ॥

भवभूति का भावपक्ष

भावनाओं का सटीक वर्णन करने में बहुत कम कवि भवभूति की तुलना कर सकेंगे। पञ्चवटी में राम का दर्शन कर सीता जी के हृदय की क्या अवस्था है, इसका वर्णन तमसा कर रही है—

तटस्थं नैराश्यादपि च कलुषं विप्रियवशाद्
वियोगे दीर्घेऽस्मिञ्झटिति घटनात्स्तम्भितामिव।
प्रसन्नं सौजन्याद्दयितकरुणैगढिकरुणं
द्रवीभूतं प्रेम्णा तव हृदयमस्मिन् क्षण इव॥

अर्थात् इस समय तुम्हारा हृदय पुनः समागम की आशा न होने के कारण उदासीन और अहित के कारण खिन्न हो गई है। इस दीर्घ कालव्यापी वियोग में अप्रत्याशित समागम के कारण निश्चेष्ट, राम दर्शनके कारण प्रसन्न, प्रिय की शोकाकुल दशा को देखकर शोक से अत्यन्त आतुर तथा स्नेह से द्रवीभूत हो रहा है।

इस श्लोक में एक साथ अनेक भावनाओं का जैसा सुन्दर चित्रण किया गया है, वह दर्शनीय है।

महाकवि भवभूति का वर्णन वैचित्र्य-

बाल्यावस्था की मुग्धकारी सरलता

सीता की बाल्यावस्था का वर्णन—

प्रतनुविरलैः प्रान्तोन्मीलन्मनोहरकुन्तलै
दर्शनमुकुलैमुग्धालोकं शिशुर्दधती मुखम् ।
ललितललितैज्योत्स्नाप्रायैरकृत्रिमविभ्रमै-
रकृत मधुरैरम्बानां मे कुतुहलमङ्गकैः ॥

अर्थात् इस समय अत्यन्त सूक्ष्म तथा विरल, प्रान्तभागों पर लहराता हुए मनोहर केशों से कलियों के समान सुन्दर दातों से, सुन्दर आभा वालें मुख को धारण करती हुई शैशव अवस्था में वर्तमान यह सीता भी अत्यन्त सुन्दर चाँदनी के सद्दश स्वाभाविक विलासों वाले रुचिर छोटे छोटे अङ्गों से मेरी माताओं के दर्शनौत्सुक्य को उत्पन्न करती थी।

राजा जनक के मुख से सीता की बाल्यावस्था का वर्णन—

अनियतरुदितस्मितं विराजत्कतिपयकोमसदन्तकुड्मलाग्रम् ।
वदनकमलकं शिशोः स्मरामि स्खलदसमञ्जसमञ्जुजल्पितं ते ॥

अर्थात् हा पुत्री ! अनिश्चित रोदन-हास वाला, कोमल कलियों के अग्रभाग के समान विरल दाँतों से सुशोभित तथा बिना किसी क्रम के मनोहर एवं तोतले वचन वाले तुम्हारे शैशव के समय के मुख का स्मरण करता हूँ ।

किशोरावस्था की सहज चपलता

षष्ठ अङ्क में लव और कुश को देखकर राम के मन में सीता की किशोरावस्था का स्मरण हो आता है—

अपि जनकसूतायास्तच्च तच्चानुरुपं
स्फुटमिह शिशुयुग्मे नैपुणोज्ञेयमस्ति।
ननु पुनरिव तन्मे गोचरीभूतमक्ष्णो-
रभिनवशतपत्रश्रीमदास्यं प्रियायाः॥

अर्थात् जानकी के सदृश अङ्गभङ्गी गुण समुह इन दोनों बच्चों में स्पष्ट है, किन्तु सावधानी से ही उसका अनुमान किया जा सकता है। ऐसा लग रहा है कि नये कमल के सदृश शोभा युक्त प्रिया सीता का वह मुख मेरी आँखों के सामने फिर से प्रकट हो गया है।

यौवन की उद्दाम स्थिरता किन्तु मर्यादित श्रृंगारभावना

तदा किञ्चित्किञ्चित्कृतपदमहोभिः कतिपयै-
स्तदीषद्विस्तारि स्तनमुकुलमासीन्मृगदृशः ।
वयःस्नेहाकुतव्यतिकरघनो यत्र मदनः
प्रगल्भव्यापारः स्फुरति हृदि मुग्धश्च वपुषि ॥

जिस समय तारुण्य, प्रेम और विशिष्ट विषयाभिप्राय के सम्पर्क से गाढ (अर्थात् उत्कर्ष को प्राप्त) कामदेव हृदय में प्रौढ़ व्यापार वाला होकर और शरीर में (लज्जा के कारण) अप्रौढ़ होकर रहता है, उस समय धीरे धीरे स्थान लेने वाला हरिणाक्षी सीता का वह कली के सदृश स्तन कुछ दिनों में कुछ विस्तृत हो गया था।

प्रौढत्व एवं बार्धक्य की स्नेहपूर्ण वात्सल्यवृत्ति -

राम को देखकर अरुन्धती का वात्सल्य –

कुवलय दलस्निग्धश्यामः शिखण्डकमण्डनो
वटुपरिषदं पुण्यश्रीकः श्रियेव सभाजयन्।
पुनरपि शिशुर्भुतो वत्सः स मे रघुनन्दनो
झटिति कुरुते दृष्टः कोऽयं दृशोरमृताञ्जनम्॥

नीलकमलदल के समान कोमल और साँवला, काकपक्ष से भूषित, पवित्र शोभा वाला, शोभा से वटुओं की परिषद को अलङ्कृत करता हुआ सा तथा वह मेरा वत्स रघुनन्दन (राम) पुनः बालक हो गया है। (ऐसा प्रतीत होता हुआ) यह कौन दिखलायी देता हुआ सहसा नेत्रों में अमृताञ्जन कर रहा है।

राम का वात्सल्य का वर्णन—

अङ्गादङ्गात् सृत इव निजस्नेहजो देहसारः
प्रादुर्भूय स्थित इव वहिश्चेतनाधातुरेव।
सान्द्रानन्दक्षुभितहृदयप्रस्नवेन सृष्टो
गात्रं श्लेषे यदमृतरसस्त्रोतसा सिञ्चतीव॥

दाम्पत्य प्रेम-

पवित्र प्रेम के उपासक भवभूति का दाम्पत्य प्रेम का चित्र प्रथम अङ्क में प्राप्त होता है जैसे—

अद्वैतं सुखदुःखयोरनुगतं सर्वास्ववस्थासु य-
द्विश्रामो हृदयस्य यत्र जरसा यस्मिन्नहार्यो रसः ।
कालेनावरणात्ययात्परिणते यत्प्रेमसारे स्थितं
भद्रं तस्य सुमानुषस्य कथमप्येकं हि तत्प्रार्थ्यते ॥

जो दाम्पत्य सुख और दुःख में एकरुप है, सभी अवस्थायों में अनुसरण करने वाला है, जिसमें हृदय का विश्राम है, जिसमें वृद्धावस्था से अनुराग छीना नहीं जा सकता है, जो संकोचों के समाप्त हो जाने के कारण अर्थात् विवाह से मरण पर्यन्त परिपक्व उत्कृष्ट प्रेम में अवस्थित है, उस दाम्पत्य का वह विलक्षण प्रेम किसी प्रकार बड़े पुण्य से प्राप्त किया जाता है।

काव्यप्रतिभा-

भवभूति की काव्यप्रतिभा अत्यन्त प्रशंसनीय है। उनकी भाषा भावानुसारिणी है। विविध रसों तथा भावों का एक पद्य में ही वर्णन कर देना उनकी विशेषता है। संयोग, विप्रलम्भ, करुण, वीर आदि रसों का वर्णन उन्होने कुशलता के साथ किया है। उनकी अतिशय भावुकता भाव को इतना प्रकट कर देती है कि उनका चित्रण कालिदास की तरह व्यंग्य न होने के कारण कालिदास के बाद ही भवभूति का नाम आता है। उत्तररामचरित में भवभूति की शब्दचित्र उतारने की बड़ी प्रबल क्षमता है। उनके शब्दों में अर्थ के अनुरूप ध्वनि स्वतः ही मुखरित हो जाती है। वे पात्रानुरूप ही भाषा का प्रयोग करते हैं। जैसे अष्टावक्र, वाल्मीकि, ब्रह्मचारी वटुओं की भाषा आश्रमों के अनुरूप है। जनक, अरुन्धती तथा वशिष्ठ आदि की भाषा दार्शनिक चिन्तन से ओत प्रोत है और तमसा, मुरला, विद्याधर-विद्याधरी आदि की भाषा कुछ अलौकिक तत्त्व से युक्त सी है।

अलङ्कार प्रयोग-

उत्तररामचरित में भवभूति के अलङ्कार स्वतः ही उमड़ते चले आए हैं। उसके पाण्डित्य से अपरिचित व्यक्ति को वे 'अपृथग्यत्ननिर्वरत्य' ही प्रतीत होंगे। उपमा के प्रयोग में वे बहुधा मूर्त की उपमा अमूर्त से दिया करते हैं, यथा—

परिपाण्डुदुर्बकपोलसुन्दरं दधती विलोलकबरीकमाननम्।
करुणस्य मूर्तिरथवा शरीरिणी विरहव्यथेव समुपैति जानकी॥

भवभूति की विशेषता-

भवभूति अपने श्लोकों को अनेक संवादों में विभक्त कर देते हैं और वे बहुधा अपने श्लोकों को अपनी कृतियों में दोहराया करते हैं, कभी-कभी वे अपनी कृतियों के संबंध में प्रशंसासूचक संकेत भी करते चलते हैं, जैसे— अहो संविधानम्! अहो! सरसरमणीयता संविधानकस्य और अस्ति वा कुलंश्वेदेवभूतमद्भुतं विचित्ररमणी-योज्वलं प्रकरणम् ! !

उनकी नाटकों में विदुषक का अभाव। वे अपनी रचनाओं में प्रायः हास्य को विशेष स्थान नहीं देते। जहाँ प्रसंग आया हैं, वहाँ वे बड़े ही शिष्ट एवं मर्यादित हैं। वस्तुतः यह उनकी स्वाभाविक गम्भीरता का परिणाम है।

भवभूति ने प्रकृति के सुकुमार और भयावह दोनों ही रूपों का चित्रण किया है। वे प्रकृति का मानवीकरण कालिदास के समान तो नहीं कर सके, परन्तु उन्होंने जिस प्रकार उसके हृदयों का अंकन किया है, वह हृदयस्पर्शी अवश्य है। जैसे वहाँ के द्रुम और मृग भी सीता-राम के बन्धु हैं, मयूर भी सीता का स्मरण करता है, वृक्ष भी पुष्पों से राम को अर्घ्य देते हैं। करुण भावनाओं के चित्रण में भवभूति के समान सफलता सम्भवतः बहुत कम कवियों को मिली हो। उसके कारुण्योत्पादक काव्य को सुनकर— *'अपि ग्रावा रोदित्यपि दलति वज्रस्य हृदयम्।'*

तृतीय अङ्क की विशेषता –

समस्त तृतीय अङ्क इसी करुण-धारा से आप्लावित है। करुणभाव की अभिव्यक्ति से भवभूति छांट-छांट कर ऐसे विभावादि लाते हैं, जिससे बरबस हृदय पिघल जाता है। वासन्ती राम को पहली बातों का स्मरण कराती हुई कहती है—

अस्मिन्नेवलतागृहे त्वमभवस्तनमार्ग दत्तेक्षणः
सा हंसैः कृतकौतुका चिरमभूद् गोदावरी सैकते।
आयान्त्या परिदुर्मनायितमिव त्वां वाक्ष्य बद्धस्तया
कातर्यादरविन्दकुड्मलनिभो मुग्धः प्रणान्जलिः॥

भवभूति के संबंध में गोवर्धनाचार्य ने बहुत ही सुन्दर मन्तव्य आर्या छन्द में कहा हैं—

भवभूतिः सम्बन्धाद् भूधरभूरेव भारती भाति।
एतत्कृतकारुण्ये किमन्यथा रोदिति ग्रावा?॥

प्रकृत प्रेम—

भवभूति आदर्श प्रेम के व्याख्याता थे। वासनामय कलुषित प्रेम को उन्होंने अपनी रचनाओं में कभी नहीं आने दिया। प्रेम किसी बाह्य कारणों पर आश्रित नहीं होता, उसमें तो कोई अनिर्वचनीय आन्तरिक कारण ही प्रमुखता से होता है। सूर्य के उदय होने पर ही कमल खिलता है और चन्द्र्मा के उदय होने पर चन्द्रकान्तमणि द्रवित होने लगती है (६/१२) सच्चा प्रेम सदा-सर्वदा एक सा रहता है। उसमें समय के साथ कमी नहीं आती, वह उत्तरोत्तर समृद्ध ही होता रहता है। उसमें हृदय को परम विश्राम मिलता है ऐसा दाम्पत्य प्रेम बड़ी कठिनता से प्राप्त होता है। (१/३९) प्रेमी अपने प्रियतमा के लिए एक बहुत बड़ी निधि होता है (६/५) सन्तान इस पारिवारिक प्रेम को बढाने वाली होती है— वह दम्पती के अन्तःकरण की आनन्दग्रन्थि होती है (३/१७)। स्त्री के लिए उसका पति और पति के लिए उनकी पत्नी दोनों परमप्रिय मित्र हैं। यही सबसे बडा सम्बंध है। इच्छाओं की पूर्णता सबसे बड़ी निधि है, यही साक्षात् जीवन भी है।

रस योजना—

उत्तररामचरित की रसयोजना के सम्बन्ध में प्रायः सभी आलोचकों ने ‘करुणरस’ को अङ्गी रस के रूप में स्वीकार किया है। उनकी मान्यता का आधार भवभूति का अपना ही श्लोक है-

‘एको रसः करुण एव निमित्तभेदात्.....’(३/४६)।

- ‘उत्तररामचरित’ सदृश मङ्गलकारी नाटक कठिनता से ही देखने को या पढने को मिलता है। यह नाटक सभी अवस्थाओं में सुख- दुःख का अनुपम अद्वैत हैं। इसमें सर्वत्र आनन्द और करुणा की स्रोतस्विनी प्रवाहित होती रहती हैं। इस नाटक को देखने अथवा सुनने अथवा पढ़ने से हृदय अपार विश्राम का लाभ करता है, कहीं भी रस की धारा विच्छिन्न नहीं होती, हृदय में सत्त्वोद्रेक होने से तमो का आवरण नष्ट हो जाने के कारण यह प्रेम तत्त्वमय प्रतीत होता है।

धन्यवाद